ISSN: 0976-2876 (Print)
SPECIAL EDITION
ISSN: 2250-0138 (Online)

भारत में विज्ञान की विकसित परंपरा

आशा राठौर[1]

हिन्दी, श्री राघवेंद्र सिंह हजारी शासकीय महाविद्यालय हटा, दमोह (म० प्र०), भारत

शोध सारांश

भारतीय ज्ञान परंपरा सिर्फ धर्म, दर्शन और आध्यात्मिक ज्ञान का स्त्रोत ही नहीं है, वरन् प्राचीन काल से प्रमाणिभूत विज्ञान की समृद्ध एवं विकसित परंपराका भी रही है। आज समय आ गया है कि हमें अपने विज्ञान की प्राचीन समृद्ध परंपरा से अवगत होना ही होगा और सभी को अवगत कराना होगा। उस समृद्ध परंपरा धारा को पुनः प्रवाहित करना होगा। अपनी परंपराओं और जातिय स्मृतियों के सहारे कोई भी राष्ट्र प्रगति करता है और जो अपनी परंपराओं और जातिय स्मृतियों से दूर हो जाता है या उनकी अवहेलना करता है, वह अपनी अस्मिता को भी खो देता है। यही कारण है कि हमें इन सभी से जुड़े रहना होगा; क्योंकि पिछले लगभग 1500 वर्षों के इतिहास को जब हम देखते हैं, तो पाते हैं कि इस दौरान विदेशी आक्रांताओं के आक्रमणों एवं विदेशी शासकों की विनाशकारी नीतियों के कारण भारत की कई दृष्टि से बहुत हानि हुई। यद्यपि यह धारा पूर्ण रुप से कभी नहीं रुकी हुई,लेकिन बाधित जरूर हुई। उन बाधाओं को दूर करना होगा। प्रस्तुत शोध पत्र में भारत की समृद्ध विज्ञान परंपरा के अंतर्गत गणित, खगोल विज्ञान,स्वास्थ्य विज्ञान एवं आयुर्वेद, धातु विज्ञान,रसायन शास्त्र, वास्तुशास्त्र एवं अभियांत्रिकी, कालगणना, योग आदि के माध्यम से इसे स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

बीज शब्द : भारतीय ज्ञान परंपरा, गणित,खगोल शास्त्र, धातु विज्ञान, रसायनशास्त्र आदि

मुख्य भाग

भारत के गौरवशाली इतिहास का गहराई से अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि मानव सभ्यता के विकास क्रम में अन्य सभ्यताओं के पूर्व आर्य सभ्यता का विकास हुआ। एक ऐसी सभ्यता जिसने समस्त आर्यावर्त को धन–धान्य, कला, साहित्य, दर्शन, ज्ञान–विज्ञान से समृद्ध किया। एक ऐसी विकसित परंपरा का आरंभ किया जिससे भारत को उसकी भौतिक समृद्धि के कारण सोने की चिड़िया और धर्म, अध्यात्म, दर्शन, ज्ञान–विज्ञान के विकास के कारण जगत् गुरु कहा जाने लगा। भारत का अन्य देशों से व्यापार के प्रमाण भी ऐतिहासिक रूप से प्राप्त हो चुके हैं। भारत का व्यापार विश्व के सुदूर देशों तक फैला हुआ था। आर्यावर्त के विस्तृत भौगोलिक स्थिति का वर्णन करते हुए कॉण्ट जॉन्स जेर्ना (Count Jerna) लिखते हैं –

"आर्यावर्त केवल हिंदू धर्म का ही घर नहीं है, वरन् संसार की सभ्यता का आदि भंडार है। हिंदुओं की सभ्यता क्रमशः पश्चिम की ओर इथोपिया, इजिप्त और फिनिशिया तक, पूर्व दिशा में श्याम, चीन और जापान तक, दक्षिण में लंका, जावा ,सुमात्रा तक और उत्तर की ओर परशिया,चांडिल्या और कोल्विस और वहां से यूनान और रोम हियर वोरियन्स के रहने के स्थान तक पहुँची।" (हिंदू देवताओं की वंशावली, Theogony of the Hindu's) इसी तरह अन्य विदेशी विद्वानों के बहुत से कथन आज उपलब्ध है।

आज का विश्व मानता है कि कोलंबस ने अमेरिका की खोज 1498 ई० में की, पर यह तथ्य भी भ्रामक है। हिन्दू और बौद्धों के बहुत पुराने चिह्न वहां प्राप्त हुए हैं। दक्षिण अमेरिका के पेरू नामक राज्य में एक सूर्य मंदिर है,जिसका आकार उन्नाव (दतिया) के सूर्य मंदिर से मिलता है। प्रोफेसर जॉन फायर अमेरिका के 'हारपर्स' नामक मासिक पत्र में एक लेख लिखकर यह साबित कर चुके हैं कि कोलंबस के सैकड़ो वर्ष पहले बौद्ध धर्म के प्रचारगण वहां गए थे और उन्होंने बौद्ध धर्म और एशियाई सभ्यता का प्रचार किया था।

ऐसे कितने ही ऐतिहासिक प्रमाण और विदेशी विद्वानों के कथन नई–नई खोजों और अनुसंधान से प्राप्त हो रहे हैं, जो ज्ञान–विज्ञान, साहित्य, कला, धर्म, दर्शन, व्यापार के क्षेत्र में भारत के गौरवशाली अतीत को प्रमाणित करते हैं। लेकिन विडंबना यह है कि हम भारतवासी ही अपने आप पर विश्वास नहीं करते और हम उसे तब स्वीकार करते हैं जब कोई विदेशी हमें बताता है, प्रमाण देता है। कितनी बड़ी विडम्बना है यह!!

[1]Corresponding author

हां, लेकिन मैं यहां यह भी कहना चाहूंगी कि इस मानसिकता के लिए पूरी तरह से हम ही जिम्मेदार है, ऐसा भी नहीं है। भारत पर पिछली लगभग 1500 वर्षों से विदेशी आक्रांताओं के आक्रमण एवं विदेशी शासकों की नीतियों ने भी भारतीयों में हीन भावना पैदा की, जिससे बाहर निकलने में समय लग रहा है। लेकिन पूर्ण आशा एवं विश्वास है कि हम अपने आत्मसम्मान को प्राप्त कर भारत को वहीं प्रतिष्ठित करेंगे, जहां भारत पहले था। यह लक्ष्य कुछ कठिन जरूर है, लेकिन असाध्य नहीं। मैथिलीशरण गुप्त जी की कुछ पंक्तियां यहां प्रासंगिक प्रतीत होती है–

हम क्या थे, क्या हो गये, क्या होगे अभी,

आओ विचारे आज मिलकर समस्याएं सभी।

शैशव दशा में देश प्रायः जिस समय सब व्याप्त थे,

निरूशेष विषयों में तभी हम प्रौढता को प्राप्त थे।

संसार को पहले हमी ने ज्ञान–भिक्षा दान की,

आचार की, व्यापार की व्यवहार की, विज्ञान की।

भारत सिर्फ व्यापार और कृषि के लिए ही प्रसिद्ध नहीं था, बल्कि विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में भी अप्रतिम सफलता भारत ने प्राप्त की थी। भारतीय विज्ञान का आधार तर्क, अवलोकन ,अनुभव और प्रयोग रहा । जीवन और जगत् के समग्र एवं संतुलित विकास को लेकर भारतीय विज्ञान की परंपरा अनवरत आगे बढ़ती रही। विज्ञान का उद्देश्य केवल भौतिक प्रगति करना नहीं था ,बल्कि धर्म, दर्शन एवं कला से इसे समन्वित कर संपूर्ण ज्ञान प्रणाली का विकास करना था। भारतीय ऋषियों और विद्वानों ने न केवल सैद्धांतिक ज्ञान विकसित किया, बल्कि उसे अनुप्रयोगों द्वारा व्यावहारिकता में रूपांतरित किया। गणित से लेकर चिकित्सा, खगोल विज्ञान से लेकर धातुकर्म –हर क्षेत्र में भारत ने विश्व को महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। ग्रंथों एवं परम्पराओं के माध्यम से इस ज्ञान को पीढ़ी–दर–पीढ़ी हस्तांतरित एवं संरक्षित किया।

आज जब हम अपनी विज्ञान और तकनीकी की समृद्ध परंपरा को भूल, विदेशों के मुखापेक्षी बने हुए हैं, तब हमें प्रख्यात वैज्ञानिक सर सी०वी० रमन के इस कथन पर विचार करना चाहिए, जो उन्होंने प्रयाग के विज्ञान महाविद्यालय के दीक्षांत भाषण में सन् 1949 में कहा था –"छात्रों जब हम कहीं से आयात करते हैं, तब हम न केवल अपने अज्ञान की कीमत चुकाते हैं, अपितु हम अपनी अक्षमताओं की भी कीमत चुकाते हैं।"

इतिहास में ऐसे भी कई उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि तर्क एवं प्रयोग के संबंध में भारतीय दृष्टिकोण अधिक उदार एवं व्यापक रहा, जबकि पाश्चात्य दृष्टिकोण अत्यंत संकीर्ण एवं कठोर रहा।

भारत में विज्ञान की परंपरा

भारत में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन–अध्यापन एवं अनुसंधान की परंपरा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। अनेक ऋषिओं ने अपना संपूर्ण जीवन इन खोजो एवं अनुसंधानों हेतु समर्पित कर दिया। ऋषि भृगु, वशिष्ठ, भरद्वाज, अत्रि, गर्ग, शौनक, शुक्र, नारद, चाक्रायण, धुंडीनाथ, नंदीश, काश्यप, अगस्त्य, परशुराम, द्रोण, दीर्घतमस आदि हुए जिन्होंने विमान विद्या, नक्षत्र विज्ञान, रसायन विज्ञान, अस्त्र–शस्त्र रचना, जहाज निर्माण आदि सभी क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य किया।

उदाहरण के लिए भृगु ऋषि अपने शिल्पशास्त्र में शिल्प की जो परिभाषा करते हैं,वह इतनी व्यापक थी कि उसकी परिधि में अनेक शास्त्र आ जाते हैं–

नानाविधानां वस्तूनां यंत्राणाँ कल्पसंपदा।

धातूनां साधनानां च वास्तूनां शिल्पसंज्ञितम्।

कृषिर्जलं खनिश्चेति धातुखण्डं त्रिधाभिधम् ॥

नौका–रथाग्नियानानां, कृतिसाधनमुच्यते ।

वेश्म, प्राकार, नगररचना वास्तु संज्ञितम् ॥

– भृगु संहिता–१३

उक्त परिभाषा में ऋषि भृगु ने (1) कृषि शास्त्र (2) जल शास्त्र (3) खनि शास्त्र (4) नौका शास्त्र (5) रथ शास्त्र (6) अग्नियान शास्त्र (7) वेश्म शास्त्र (8) प्राकार शास्त्र (9) नगर रचना (10) यंत्र शास्त्र। इसके

अतिरिक्त 32 प्रकार की विद्याएँ तथा 64 प्रकार की कलाओं का उल्लेख आता हैं। यह सारी विद्याएं मानव के संपूर्ण जीवन को अपनी परिधि में समेटे हैं। इससे ज्ञात होता है कि एक समृद्ध विज्ञान परंपरा आदिकाल से ही भारत में विद्यमान थी। इस शोधपत्र में विज्ञान की कुछ शाखाओं पर संक्षिप्त में प्रकाश डाला गया है, जिन पर भारत में अभूतपूर्व कार्य हुआ है।

गणित

भारतवर्ष में गणित शास्त्र की परंपरा अति प्राचीन रही है। प्राचीन भारत में गणित का महत्त्व प्रतिपादित करने वाला एक श्लोक प्रचलित था, जिससे ज्ञात होता है कि गणित का भारत में कितना महत्त्व था–

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा ।

तद्वद् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्धनि स्थितम् ॥

(याजुष ज्योतिषम)

अर्थात् जैसे मोरों में शिखा और नागों में मणि सबसे ऊपर रहती है, उसी प्रकार वेदांग और शास्त्रों में गणित सर्वोच्च स्थान पर स्थित है।

भारत विश्व में गणित का जन्मदाता है। यूरोप की सबसे पुरानी गणित की पुस्तक 'कोडेक्स विजिलेन्स'' है। यह पुस्तक स्पेन की राजधानी मैड्रिड के संग्रहालय में रखी है। इसमें लिखा है–

"गणना के चिन्हों से (अंकों से) हमें यह अनुभव होता है कि प्राचीन हिन्दुओं की बुद्धि बड़ी पैनी थी तथा अन्य देश गणना व ज्यामिति तथा अन्य विज्ञानों में उनसे बहुत पीछे थे। यह उनके नौ अंकों से प्रमाणित हो जाता है, जिनकी सहायता से कोई भी संख्या लिखी जा सकती है।"

भारतीय अंक किस तरह से भारत से अरब, यूनान और पश्चिमी यूरोप और संपूर्ण विश्व तक पहुंचे,अंकों की इस यात्रा का संक्षिप्त उल्लेख पुरी के शंकराचार्य श्रीमद् भारती कृष्णतीर्थ जी ने अपनी अद्भुत पुस्तक 'वैदिक गणित' में किया है। उन्होंने बताया कि तथाकथित भारतीय विद्वानों के विपरीत आधुनिक गणित के मान्य विद्वान यथा प्रो. जी. पी. हाल्स्टैंड, प्रो. गिन्सबर्ग, प्रो. डी. मोर्गन, प्रो. हटन जो सत्य के अन्वेषक तथा प्रेमी हैं, इन विद्वानों ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया और भारत के इस योगदान की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है ।

गणित की दाशमिक प्रणाली,अंकगणित, प्रथम दशगुणोत्तर संख्या, द्वितीय शत गुणोत्तर संख्या,तृतीय कोटी गुणोत्तर संख्या आदि अप्रतिम है और गणित के क्षेत्र में बौद्धिक श्रेष्ठता को प्रतिपादित करती है।प्रथम दशगुणोत्तर संख्या का क्रम इस प्रकार है – एक, दश, शत, सहस्त्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्बुद, न्यर्बुद, समुद्र, मध्य, अन्त और परार्ध। इस प्रकार परार्ध का मान हुआ 10पर 12की घात याने दस खरब ।आगे यह संख्याएं और बढ़ती जाती है।

जैन ग्रंथ 'अनुयोगद्वार' में अंतिम संख्या असंख्येन है, जिसका मान 10 पर 140 की घात यानी 1 के ऊपर 140 शून्य वाली संख्या। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में अंक प्रणाली कितनी अधिक विकसित थी!

आगे चलकर आर्यभट्ट, श्रीधर आदि अनेक गणितज्ञ हुए। भास्कराचार्य ने 1150 ईस्वी में 'सिद्धांत शिरोमणि' नामक महान ग्रंथ लिखा, जिसके चार भाग है – 1.लीलावती 2.बीजगणित 3.गोलाध्याय 4.ग्रह गणित। इसी प्रकार बीजगणित में पूर्व काल में आपस्तम्ब, बोधायन, कात्यायन तथा बाद में ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य आदि ने कार्य किया।शुल्ब सूत्र, बोधायन प्रमेय(पाइथागोरस प्रमेय) आदि भारत की ही दें है। आज से 1500 वर्ष पूर्व आर्यभट्ट ने (π) के समकक्ष मान निकला था। त्रिकोणमिति और वैदिक गणित में भारत का योगदान अप्रतिम रहा।

खगोल विज्ञान

भारत में खगोल विज्ञान की अत्यंत समृद्ध परंपरा से रही है। ग्रहों की गति से काल का निर्धारण होता है। प्रख्यात विद्वान सुरेश सोनी जी अनुसार– "प्राचीन काल से खगोल विज्ञान वेदांग का हिस्सा रहा है। ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रंथों में नक्षत्र, चान्द्रमास, सौरमास, मल मास, ऋतु परिवर्तन, उत्तरायन, दक्षिणायन, आकाशचक्र, सूर्य की महिमा, कल्प का माप, आदि के संदर्भ में अनेक उद्धरण मिलते हैं।"

खगोलीय निरीक्षण के लिए आर्यभट्ट ने आज से लगभग 1500 वर्ष पूर्व पाटलिपुत्र में वेधशाला का

उपयोग कर कई निष्कर्ष निकाले थे। प्रत्यक्ष निरीक्षण एवं अचूक ग्रहीय एवं काल गणना का 6000 वर्ष से अधिक पुराना इतिहास है, यह तथ्य श्री धर्मपाल जी की पुस्तक 'Indian science and technology in 18th century' नामक पुस्तक में प्रख्यात खगोलशास्त्री जॉन प्लेफेयर का एक लेख 'Remarks on the astronomy of Brahmins' में मिलता है। प्रकाश की गति (सायणाचार्य), गुरुत्वाकर्षण, पृथ्वी का गोलाकार, पृथ्वी की गतिशीलता, सूर्योदय–सूर्यास्त, चंद्रग्रहण, विभिन्न ग्रहों की गति, ब्रह्मांड के विस्तार संबंधी अनेक प्रामाणिक तथ्य भारतीय खगोलशास्त्र में पूर्व से वर्णित है। (भारत में विज्ञान की उज्ज्वल परंपरा, सुरेश सोनी)

आयुर्वेद एवं स्वास्थ्य विज्ञान

आयुर्वेद प्राचीन भारत में स्वास्थ्य विज्ञान का पर्याय माना जाता था। पुराणों में अश्विनी कुमार देवताओं के चिकित्सक के रूप में उल्लेखित है। आगे चिकित्सा की यह परंपरा मुख्यतः दो भागों में चली– 1.धनवंतरी परंपरा 2.आत्रेय परंपरा।

आत्रेय परंपरा में कायचिकित्सा की प्रधानता है, जिसके प्रसिद्ध आचार्य चरक हुए। इनका 'चरक संहिता' नामक ग्रन्थ आज भी आयुर्वेद में मूर्धन्य स्थान पर है।

धनवंतरी परंपरा में शल्य चिकित्सा की प्रधानता रही जिसके प्रसिद्ध आचार्य सुश्रुत थे। 'सुश्रुत संहिता' शल्य चिकित्सा का उनका प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

चिकित्सा विज्ञान अर्थात आयुर्वेद में शरीर रचना, औषधि निर्माण, रोगों के कारण, निवारण के उपाय, शल्य चिकित्सा के औजार, टीकाकरण, शल्यक्रियाओं के प्रकार, विशिष्ट गुण युक्त संतान की प्राप्ति आदि संबंधी ज्ञान गहराई एवं विस्तार से वर्णित है।

चरक संहिता में मनुष्य के स्वास्थ्य की दी गई परिभाषा कितनी व्यापक एवं उपयुक्त है, देखिए–

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः ।

प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थो इत्यमिधीयते ॥

– चरक संहिता २

अर्थात् – जिसका त्रिदोष (वात, कफ, पित्त), सप्त धातु, मल प्रवृत्ति आदि क्रियायें सन्तुलित अवस्था में हों, साथ ही आत्मा, इन्द्रिय एवं मन प्रसन्न स्थिति में हो, वही स्वस्थ मनुष्य कहलाता है।

ऋग्वेद और अथर्ववेद में हृदय, पेट और वृक्कों के विकारों का भी विवरण मिलता है। प्राचीन काल में चिकित्सा शास्त्र से संबंधित ग्रंथकारों में सुश्रुत, पुष्कलावत, गोपरक्षित, भोज, विदेह, निमि, कैकायन, गार्ग्य, गालव, जीवक, पर्वतक, हिरण्याक्ष, कश्यप आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। प्राचीन काल से आज तक वैद्यों की ऐसी परंपरा चली आ रही है, जो नाड़ी देखकर ही आपके शरीर में हो रहे परिवर्तनों एवं रोगों के विषय में बता देते हैं। यह हमारा आयुर्वेदक ही है।

धातुकर्म और रसायनः प्राचीन भारत की विरासत

प्राचीन भारतवर्ष में विविध धातुओं के प्रयोग का उल्लेख मिलता है।चिकित्सा के क्षेत्र में, आभूषणों के रूप में, औजारों के रूप में आदि अनेक प्रयोगों में। सुरेश सोनी जी के अनुसार यजुर्वेद के मंत्र में विभिन्न धातुओं का उल्लेख आता है–

अश्मा च मे मृत्तिका च मे गिरयश्च मे पर्वताश्च मे सिकताश्च मे वनस्पतयश्च मे हिरण्यं च मेऽयश्च मे श्यामं च मे लोहं च मे सीस च मे त्रपु च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् (कृ. यजु. ४–७–५)

अर्थात मेरे पत्थर, मिट्टी, पर्वत, गिरि, बालू, वनस्पति, सुवर्ण, लोहा, लाल लोहा, ताम्र, सीसा और टीन यज्ञ से बढ़े।

रामायण, महाभारत, पुराणों, श्रुति ग्रंथों में भी सोना (सुवर्ण, हिरण्य), लोहा (स्याम), टिन (त्रपु), चांदी (रजत), सीसा, तांबा (ताम्र), काँसा आदि का उल्लेख आता है।

धातु विज्ञान से सम्बन्धित व्यवसाय करने वाले कुछ लोगों के नामः

कर्मरा– कच्ची धातु गलाने वाले

धमत्र– भट्टी में अग्नि तीव्र करने वाले

हिरण्यक– स्वर्ण गलाने वाले

खनक– खुदाई कर धातु निकालने वाले।

सुरेश सोनी जी द्वारा प्रस्तुत इन बिंदुओं से स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में भारत में लोग विभिन्न धातुओं से परिचित ही नहीं थे, बल्कि उनका अच्छी तरह से उपयोग करना भी जानते थे। भारतीय इस्पात की प्रसिद्धि तो यहां तक थी कि अरब और फारस के लोग भारतीय इस्पात की तलवारों के लिए लालायित रहते थे। नई दिल्ली में कुतुब मीनार के पास स्थित लौह स्तंभ विश्व के धातु विज्ञानियों के लिए आश्चर्य का केंद्र रहा है।इतने वर्षों से उसमें आज तक जंग नहीं लगी। इस प्रकार भारत में धातुकर्म की एक विकसित परंपरा के प्रमाण यत्र–तत्र बिखरे मिल जाते हैं।

रसायनशास्त्र की जब हम बात करते हैं तो भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रफुल्ल चंद्र राय के ग्रंथ 'द हिंदू केमिस्ट्री' का उल्लेख करना आवश्यक जान पड़ता है। इस ग्रंथ में जिस प्रकार से रसायनों का एवं रासायनिक प्रक्रियों का उल्लेख मिलता है, वह चकित करने वाला हैं। प्राचीन भारत के रसायन को समझने में यह ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। कुछ प्रमुख रसायन विशेषज्ञों में नागार्जुन (रसरत्नाकर, कक्षपुटतंत्र, आरोग्य मंजरी, योग सार, योगाष्टक), वाग्भट्ट (रसरत्नसमुच्चय), गोविंदाचार्य (रसार्णव), यशोधर (रसप्रकाश सुधाकर), रामचन्द्र (रसेन्द्र चिंतामणि), सोमदेव (रसेन्द्र चूड़ामणि) आदि महत्त्वपूर्ण है। इन ग्रंथो में रस के विविध प्रकार, प्रयोगशाला,पारे की रूपांतरण प्रक्रिया, धातुओं को मारना, विभिन्न भस्में, आसव बनाना आदि का विस्तार से वर्णन है।

वास्तुशास्त्र और अभियांत्रिकी

वास्तुशास्त्र केवल धर्म आधारित शास्त्र नहीं है, बल्कि प्राचीन भारतीय अभियांत्रिकी को समझने का एक सशक्त वैज्ञानिक साधन है। यह प्रकृति के साथ सामंजस्य, भूगोल, जलवायु और ऊर्जा प्रवाह के सिद्धांत पर आधारित है। शिल्पकार्य के लिए मिट्टी, ईंट, चूना, पत्थर, लकड़ी, धातु तथा रत्नों का उपयोग किया जाता था। स्थापत्यशास्त्र से संबंधित विश्वकर्मा वास्तुशास्त्र, कश्यप शिल्प, भृगु संहिता आदि ग्रंथ महत्त्वपूर्ण है। उड़ीसा का लिंगराज मंदिर, एलिफेंटा की गुफाएं, खजुराहो के मंदिर,गुजरात में गिरनार के मंदिर, श्रीरंगपटनम मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, मदुरई का मीनाक्षी मंदिर आदि ऐसे अनेकों प्रमाण भारतीय स्थापत्य कला के वैभव के संपूर्ण भारतवर्ष में मिलते हैं।

योगः मन–शरीर का विज्ञान

भारतीय योग मन और शरीर का एक समन्वित विज्ञान है, जो हजारों वर्षों से मानव जीवन को संतुलित, स्वस्थ और जागरूक बनाने का कार्य करता आ रहा है। योग केवल शारीरिक व्यायाम नहीं है, बल्कि यह मानसिक, आध्यात्मिक और भावनात्मक विकास का भी माध्यम है। इसका मूल उद्देश्य शरीर, मन और आत्मा के बीच सामंजस्य स्थापित करना है। महर्षि पतंजलि में अष्टांग योग को स्थापित किया। उनके अष्टांग योग के आठ अंग इस प्रकार हैं–

यम – नैतिक अनुशासन (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह)

नियम – व्यक्तिगत आचरण (शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर–प्रणिधान)

आसन – शरीर को स्वस्थ और स्थिर रखने वाले योगाभ्यास

प्राणायाम – श्वास–प्रश्वास का नियंत्रण

प्रत्याहार – इंद्रियों को बाहरी विषयों से हटाना

धारणा – मन को एकाग्र करना

ध्यान – निरंतर एकाग्रता की अवस्था

समाधि – आत्मा और परमात्मा का एकत्व, सर्वोच्च अवस्था।

योग की अंतिम अवस्था समाधि की स्थिति में व्यक्ति मोक्ष को प्राप्त हो जाता है। फिर उसे किसी तरह की व्याधि व्याप्त नही होती।

आज के भागदौड़ भरे जीवन में योग का महत्त्व और भी बढ़ गया है। यह हमें न केवल शारीरिक रूप से स्वस्थ रखता है, बल्कि मानसिक संतुलन और आंतरिक शांति भी प्रदान करता है। इस प्रकार, भारतीय योग वास्तव में मन और शरीर का एक पूर्ण विज्ञान है, जो समग्र स्वास्थ्य की दिशा में मार्गदर्शन करता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध एवं प्राचीन ज्ञान प्रणाली है, जिसका संबंध केवल धर्म, दर्शन एवं आध्यात्म से ही नहीं है, वरन् विज्ञान विविध शाखाओं, शिल्प, कला, व्यापार–व्यवसाय से भी है। भारतीय ज्ञान परंपरा हमेशा से ही संतुलित दृष्टिकोण को लेकर आगे बढ़ी है। यह जहां मनुष्य के आध्यात्मिक विकास पर जोर देती है, वही उसके व्यवहारिक भौतिक जीवन की समृद्धि को लेकर भी सजग है। विद्युत शास्त्र, मैकेनिक एवं यंत्र विज्ञान, धातु विज्ञान, विमान विद्या, नौका शास्त्र, वस्त्र उद्योग, गणित शास्त्र, काल गणना, खगोल शास्त्र, रसायन शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, कृषि विज्ञान, प्राणी विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान आदि ज्ञान की विविध शाखा के माध्यम से ज्ञान परंपरा प्रवाहित होती रही।

इसीलिए हिन्दी के प्रमुख कवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने अपनी रचना 'भारत भारती' में लिखा है–

हमको विदित थे तत्त्व सारे नाश और विकास के,

कोई रहस्य छिपे न थे पृथ्वी तथा आकाश के!

थे जो हज़ारों वर्ष पहले जिस तरह हमने कहे,

विज्ञान–वेत्ता अब वही सिद्धांत निश्चित कर रहे।

ज्यो–ज्यो प्रचुर प्राचीनता की खोज बढ़ती जायेगी,

त्यों–त्यों हमारी उच्चता पर ओप चढ़ती जाएगी।

जिस ओर देखेंगे हमारे चिह्न दर्शक पायेंगे,

हमको गया बतलाएंगे, जब जो जहां तक जायेंगे।

निश्चित ही मैथिलीशरण गुप्त जी की पंक्तियां वर्तमान में भारतीय ज्ञान परंपरा के विषय में अत्यंत प्रासंगिक एवं आवश्यक प्रतीत होती है। आज और अधिक खोज एवं अनुसंधान की आवश्यकता है और जैसे–जैसे यह होगा, हमारी श्रेष्ठता स्वतरू ही सिद्ध होती जाएगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

सोनी, सुरेश .(2023/भारत में विज्ञान की उज्ज्वल परंपरा (सातवां संस्करण–).अर्चना प्रकाशन, भोपाल।

व्यास, डॉ० एल० एल०.(1984) वैदिक गणितशास्त्र. मंगल प्रकाशन, जयपुर।

सलूजा, चांदकिरण. शिक्षाः भारतीय परिपेक्ष. संस्कृत संवर्धन प्रतिष्ठान, दिल्ली।

कोठारी, अतुल. (2023), शिक्षा विकल्प एवं आयाम. प्रभात पेपर बैक, नई दिल्ली।

गुप्त, मैथिलीशरण. (2019), भारत भारती (तीसरा संस्करण). लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।